अध्याय-तीसरा

नागार्जुन के आँचलिक उपन्यासों में विवाह समस्याएँ।

विवाह मूलत: व्यक्ति के धार्मिक एवं सामाजिक कर्तव्यों की पूर्ति के लिए तथा परिवार के कल्याण के निमित्त संपन्न होनेवाला एक पवित्र संस्कार है। इस संदर्भ में डॉ. प्रीतिप्रभा गोयल का कहना है -

"समाज से मान्यता प्राप्त कुछ धार्मिक कृत्यों और विधियों द्वारा स्त्री - पुरुष का विधिवत् मिलन ही विवाह का संस्कार है, जिसका उद्देश धर्म कार्य, पुत्र प्राप्ति एवं रति के प्रयोजन को पूर्ण करना है।" [1]

विवाह के इन उद्देशों को देखने पर यही ज्ञात होता है कि विवाह केवल व्यक्तिगत प्रश्न नहीं है अपितु एक सामाजिक उत्तरदायित्व है। इस संबंध में डॉ. कलावती प्रकाश का कथन है -

"हिंदु समाज में विवाह व्यक्तिगत प्रश्न नहीं वरन् एक सामाजिक दायित्व है। एक से दो होकर व्यक्ति संपूर्णता को प्राप्त होता है जिससे उसका जीवन नियमित होता है, साथ ही वह कुटुंब व समाज के प्रति अपने उत्तरदायित्व के ऋण से भी मुक्त होता है।" [2]

विवाहसे अनेक भावात्मक तथा दैहिक आवश्यकताओं की पूर्ति भी होती है। इस संदर्भ में डॉ. प्रीति प्रभा गोयल का कथन है -

---

१. डॉ. प्रीति प्रभा गोयल - हिंदु विवाह मिमांसा - पृ. २५, राजस्थानी ग्रंथागार, जोधपुर, - संस्करण - १९८०.

२. डॉ. कलावती प्रकाश - महासमरोत्तर हिन्दी उपन्यासों में जीवन दर्शन - पृ. ६६, श्याम प्रकाशन, जयपुर - ३, प्रथम संस्करण - १९८७.

" विवाह से दो विषमलिंगी व्यक्ति मिलकर, सामाजिक मान्यता और धार्मिक संस्कार पूर्वक धर्म, प्रजा, यौन संबंध और व्यक्तित्व के विकास की आवश्यकताओं की पूर्ति नियमित रूप से करते हैं और मानवता के नाते इन सुखों के बदले उत्तरदायित्वों को भी स्वेच्छापूर्वक स्वीकार करते हैं। " [१]

गृहस्थी जीवन में इसी उत्तरदायित्व को स्वीकार किया जाता है। जिससे पति और पत्नी समाज अधिकार प्राप्त करते हैं। दोनों मिलकर गृह-तंत्र का ताना-बाना बनाते हैं। योग्यतानुसार श्रम विभाजन करके सुगमता पूर्वक जीवन यापन कर सकते हैं। पति गृहस्थी के लिए अर्थार्जन करे और पत्नी भोजनादि का प्रबंध करे, घर को सजाएँ-सवाँरे। इसमें न पत्नी पति से हीन है और न पति पत्नी से श्रेष्ठ।

यह उज्वल एवं सुखद दाम्पत्य जीवन की कल्पना काल के साथ साथ परिवर्तित होती गयी। पुरुष प्रधान संस्कृति के नामपर सुखावह दाम्पत्य जीवन का अर्थ भी बदलता गया। विशेषत: सामन्ती युग में वैवाहिक संबंधों का स्वरूप जितना विकृत हुआ उतना इतिहास के किसी भी काल में नहीं हुआ होगा। इस काल में धर्मशास्त्री, पंडितों एवं पुरोहितों की धन लोलुप वृत्ति के कारण धर्म और नैतिकता के सारे बंधन स्त्रियों पर लाद दिये गये। धर्म के नामपर स्त्री को एकबार ही विवाह करने का, एक पतिव्रता रहनेका तथा वैधव्य में पुनर्विवाह न करने का बंधन अनिवार्य माना गया। वैधव्य जीवन गत-जन्म के पाप का फल होता है ऐसा माना जाने लगा। यहाँतक कि स्त्री का शिक्षा लेना भी पाप माने जाने लगा।

---

१. डॉ. प्रीति प्रभा गोयल - हिंदु विवाह मिमांसा - पृ. २५, राजस्थानी ग्रंथागार, जोधपुर, संस्करण - १९८०.

इन बंधनों के कारण नारी जीवन चार दीवारों में ही बंद होता गया, जिससे पुरुष मुक्त और स्वेच्छाचारी बनता गया। वह अपनी इच्छापूर्ति के लिए अनेक विवाह करने लगा। परिणामत: अनमेल विवाह, बहु विवाह जैसी प्रथाओं का प्रचलन हुआ। इसके मूलमें कभी दहेज, तो कभी उच्चकुलीनता, तो कभी सुंदर नारी की मोहकता, तो कभी असीम कामेच्छा रही है। इससे निर्मित समस्याओं का यथार्थ वर्णन नागार्जुन ने अपने आँचलिक उपन्यासों में चित्रित किया है। जिससे साधारण से साधारण मानव भी उन समस्याओं, रुढियों एवं कुण्ठाओं से परिचित हो सकता है।

नागार्जुन मिथिला जनपदके सुपुत्र है अत: वहाँ की प्रचलित परंपराओं, रुढियों को तथा सौरठ सभा जैसे विवाह बाजारों को देखा है। उससे निर्मित अनमेल, विवाह, बहु विवाह तथा वैधव्य पूर्ण जीवन की समस्याओं को भी निकटतासे देखा है। इन समस्याओं को वहाँ के समाज की जडता और निष्क्रियता ने मजबूत किया है। इसलिए इन समस्याओं को नागार्जुन ने अपने उपन्यासों में मौलिकता के साथ सामाजिक परिप्रेक्ष्य में उद्घाटित करनेका प्रामाणिक प्रयास किया है।

अ] <u>अनमेल विवाह समस्या</u> -

भारतीय समाज में अनमेल विवाह एक अभिशाप है। "अनमेल" का अर्थ है - असम्बध्द, बेजोड़, बेमेल। अर्थात् दाम्पत्य जीवन में स्त्री-पुरुष में आयु, विचार और भावना की दृष्टि से सामंजस्य होना आवश्यक होता है परंतु जहाँ यह सामंजस्य स्थापित नहीं होता वह अनमेल है। इस संदर्भ में डॉ. शील प्रभा वर्मा का कथन है -

"ऐसे विवाहों में कहीं अवस्था का अन्तर होता है कहीं विचारों का। अवस्था का अन्तर अधिक होने पर भी जहाँ जीवन सुखी हो सकता है, वहीं विचारों में पार्थक्य होने की परिणिति सदा ही दुखद होती है।"[१]

---

१. डॉ. शील प्रभा वर्मा - महिला उपन्यासकारों की रचनाओं में बदलते सामाजिक संदर्भ - पृ. ६४, विद्या विहार, कानपुर-१२, प्रथम संस्करण - १९८७.

KOLHAPUR

अनमेल विवाह के मूल में दहेज प्रथा और आर्थिक निर्धनता प्रमुख रहीं है। क्यों कि निर्धनता के कारण लडकी के माता-पिता इच्छित दहेज देने में असमर्थ होने के कारण बहुत बार अयोग्य वरों से अपनी लडकी का विवाह कर देने के लिए मजबूर हो जाते हैं। इस संदर्भ में डॉ. कलावती प्रकाश का कथन है -

"अनमेल विवाह भी भारतीय हिंदु समाज के लिए अभिशाप सिध्द हुआ है। इसका मूल दहेज प्रथा में ढूँढा जा सकता है। यह प्रथा उस समय और भी दुखदायी हो जाती है जब वर वृध्द हो और वधु युवती।" [1]

ऐसे दाम्पत्य जीवन में पति-पत्नी अनचाहे रूप में गृहस्थी का भार ढोते रहते हैं। उनमें आत्मिक संबंध दृढ नहीं होता जो गृहस्थी के लिए आवश्यक है। कभी-कभी ऐसा होता है कि, विवाह के एक - दो वर्ष में ही पति की मृत्यु हो जाती है और पत्नी वैधव्य का जीवन जीने लगती है। ऐसी स्थिति में उसे समाज में जीना दुभर हो जाता है। तो कभी ऐसी स्थिति में अनाचार या व्यभिचार की शिकार भी बन जाती है। कभी कभी ऐसे दाम्पत्य में विवाह विच्छेद भी हो जाता है, जिससे पति-पत्नी एक दूसरे के प्रति घृणा का भाव अनुभव करते हैं, कभी दोनों में झगडा होता है, तो कभी मारपीट भी। जिससे पत्नी परित्यक्ता हो जाती है या व्यभिचार के लिए प्रवृत भी हो सकती है।

ऐसे अनमेल विवाह का मूल अर्थ, जो किसीभी समय एक परिवार, समाज, जाति और राष्ट्र का अन्त कर सकता है। वस्तुत: यह एक ऐसा पारसमणि है जिसका स्पर्श होने से मानव अर्थ के स्वर्ग में प्रवेश पा सकता है या घोर नरक के दर्शन भी।

---

१. डॉ. कलावती प्रकाश - महासमरोत्तर हिंदी उपन्यासों में जीवन दर्शन - पृ. २७, श्याम प्रकाशन, जयपुर - ३, प्रथम संस्करण - १९८७.

8832
A

नागार्जुन ने अपने उपन्यासों में मिथिला प्रांत में प्रचलित अनमेल विवाह की समस्याको एक मानवीय दृष्टिकोण से देखा है और उसका सहृदयता के साथ चित्रण भी किया है। उनके "नयी पौध", "वरुण के बेटे", "कुम्भीपाक" और "पारो" आदि उपन्यासों मे अनमेल विवाह का यथार्थ चित्रण मिलता है। जो निम्न लिखित है।

नयी पौध -

१९५३ में प्रकाशित यह उपन्यास नागार्जुन के मैथिली "नवतुरिया" उपन्यास का हिंदी रूपान्तर है। इस उपन्यास में अनमेल विवाह की समस्याका चित्रण मिलता है। कथानक पुराना है, परंतु नागार्जुन ने इसे नये रूप और नये वातावरण में मौलिक रूपसे चित्रित किया है।

इस उपन्यास का पंडित खोंखाई झा ईश्वर कृपा से सात लडकियों और पाँच लडकों का पूजनीय पिता होने का सौभाग्य प्राप्त कर चुका है। वह पंडिताई का पेशा करता है, भागवत कथा सुनाने में तथा पूजा-अर्चा के लिए प्रसिध्द है, उसकी आमदनी भी काफी अच्छी है। उसने अपनी पहली बेटी रामेसरी का विवाह अच्छे परिवार में कर दिया है। परंतु वह तीन वर्ष के दाम्पत्य जीवन में एक पुत्री के पश्चात विधवा हो जाती है। विधवा हो जाने के बाद उसकी जेठानी और देवरानी उसे जीना दूभर कर देती हैं जिसके कारण वह आपने माँ-बाप के आश्रय में आती है। यहाँ रहते उसे तेरह साल हो गये है। उसकी बेटी बिसेसरी अब पन्द्रहवे साल में प्रवेश कर चुकी है।

इन चौदह सालों में पंडित जी पुराने ढर्रे की सहखर्ची और पास पडोस के लोगों से यश पाने की भूख - इन दोनों कृत्यों ने खोंखा को तबाह कर रखा है जिसके कारण वह लालची बन गया है। वह अपनी धनाभाव की पूर्ति के लिए सौरठ मेले में लडकियों के विवाह तय करने का

ठेका ले रखा है और अनेक अबोध कन्याओं को अयोग्य वरों के पल्ले बांधना शुरु कर दिया है। इसी पैसे की लालच में वह इतना अंधा बन गयाहै कि उसने अपनी छ: बेटियों को ७०० से लेकर ११०० तक रूपयों में बेच देता है। जिसके कारण उसकी सभी लडकियाँ उसे श्राप दिया करती है और अपनी बदनसीबी पर रोया करती है। क्यों कि -

"कोई गूँगे के पल्ले पडी थी तो कोई बौडम के पल्ले। कोई तीन जिला पार फेंक दी गई थी तो कोई पाँच सौ कोस पर। उनमें से चार को भाग्य ने वैधव्य के बीहड जंगल में डाल दिया था। एक पगली हो गयी थी, एक को उसके अदमखोर पति ने किरासन तेल की मदद से जलाकर राख कर डाला था।" [१]

अब वह खाँखार पंडित अपनी पितृहीन नातिन बिसेसरी को भी नंबर पर लगाया है। वह सौरठ की सभा से पाँचवी बार शादी करनेवाले साठ वर्षीय कस्तकार चतुरानन चौधरी से नौ सौ रूपये लेकर उसे निश्चित कर देता है। यह देखकर रामेसरी चिन्ता में पड जाती है। वह अपनी कोमल कली जैसी लडकी का विवाह बूढे खूसट के साथ करना नहीं चाहती है। इसलिए वह बौखलाकर सोचने लगती है -

"बिसेसरी को कनेर की गुठली घिसकर पिला दे। क्या करेगी जीकर बिसेसरी ? ऐसी जिन्दगानी से मौत लाख गुना बेहतर!! ... लडकी के जीवन को धूल में मिलानेका उसे क्या अधिकार है ? बाबू [पिता] को यह क्या होगया है ? ... दुल्हे को आने दो, उस बुड्ढे के माथे पर अंगारे न डाल दूँ तो रामेसरी का नाम नहीं। एक बुड्ढा मेरी लडकीका सींथ भरेगा, मुँह झुलसा दूँगी मरदुए का! ... मैं कर क्या सकती हूँ। चीखूँगी और चिल्लाऊँगी और अपना सर पटकूँगी,

---

१. नागार्जुन - नयी पौध - पृ. १०, राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली - २, प्रकाशन वर्ष - १९८४.

पिताजी को असहय होगा तो मुझे किसी करमे में बंद करके बाहर से साँकल चढा देंगे., शादी तो होकर रहेगी ... या, माहुर का प्रबंध करूँ कहीं से और खिला दूँ छोकरी को ... "[1]

रामसेरी अनमेल विवाह के भयंकर परिणामों को अच्छी तरह जानती थी, इसलिए पन्द्रह वर्ष की बिसेसरी का साठ वर्षीय चतुरा चौधरी से होनेवाले विवाह को रोकने के लिए इसका ममता मयी मातृहृदय तरस रहा था, छटपटा रहा था। वह विवाह को रोकना चाहती है इसी कारण विवाह के पहले वह गाँव के नवजवान दिगम्बर मल्लिक से मिलती है। जिसका पाँच-सात नव-जवानों का एक गुट था जिसे गाँव में, जो "बम पार्टी" कहलाया जाता था। उनके द्वारा गाँव में सुधार के कार्य किये जाते थे। वे भी इस विवाह को उचित नहीं मानते थे। अत: दिगम्बर मल्लिक, उसकी भाभी, माहेश्वर, चतुर्भुज, पडोसी गाँव का कॉमरेड तेज नारायण और हरोंखारा पंडित का छोटा लडका टुनाई आदि इस विवाह का विरोध करने की तैयारी करते है। विवाह विधि के समय मंडप में आकर दिगम्बर मल्लिका ने सभी बुजुर्गों को समझा-बुझाकर विवाह रोकने का प्रयास किया परंतु चतुरानन चौधरी उसे धमकाते हुए कहता है -

" तुम लोग गुण्डाई पर उत्तर आये हो! सारी कबिलियत घुसाड दूँगा।... बच्चू, अभी तो कुल-चार रोज के होवे किये हो, नाभी की नार तक नहीं कटी है अभी। अभिए चले हमें सबक सिखाने ? चार अच्छर पढ लिए हो तो क्या बूढ-पुरनिया लोगों की गंजी चाँद पर चप्पल मारोगे ? "[2]

---

१. नागार्जुन - नयी पौध - पृ. १०, राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली-२, प्रकाशन वर्ष - १९८४.

२. —— वहीं —— पृ. ५७.

इसपर दिगम्बर मल्लिक भी कडे स्वर में चुनौती देते हुए कहता है -

"आप यह गाठ बाँध लीजिए कि गाँव का एक एक नवजवान पिटते-पिटते बिछ जायेगा मगर यह ब्याह नहीं होने देगा।... लाज शरम धो-धाकर यही पी गये हैं तो क्या हम भी बेहया बन जायें ? पण्डित जी लालच के मारे उठा लाये हैं इन महाशय को, उनकी बात छोडिए। बिससेरी जैसी तो इनकी नतनी-पोती होगी ..... यह अभी सीधे नहीं मानेंगे तो बाँध-बुंधकर और खटोले पर ढोकर उन्हे कल तक फिर सोरठ पहुँचा दिया जायेगा, इन्ही के खिलाफ ..... नौजवानों का हम एक जुलुस निकालेंगे। समझ क्या रखा हैं आखिर ?.." [१]

कमपार्टी के सदस्य हायस्कूल और मिडिल स्कूल की मदद से इस विवाह के विरोध में संगठित मोर्चा निकालते है। जिससे दुल्हा चतुरानन चौधरी घबरा जाता है और अपने भांजे और नौकर को वहाँ से भागने का इशारा करते हुए खाली हाथ वापस लौट जाता है।

इस तरह उपन्यासकार ने इस उपन्यास में अनमेल विवाह की समस्याको लेकर दो पिढ़ियों में संघर्ष दिखानेका प्रयास भी किया है।

वरुण के बेटे -

१९५७ में लिखित "वरुण के बेटे" इस उपन्यास की नायिका मधुरी भी अनमेल विवाह की शिकार है। मधुरी खुरखुन मछुए की सबसे बडी बेटी है., जिसकी आयु आठारह साल की है। देखने में साँवली, बडी-बडी आँखोवाली और सतेज है। जिसकी खुब सुरती पर उसके बिरादरी के भोला मछुए के जवान बेटे-घुल्हाई और मंगल उसपर आसक्त हो जाते हैं। परंतु मधुरी केवल मंगल से ही स्नेह रखती है, उसे अमराई

---

१. नागार्जुन - नयी पौध - पृ. ५९, राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली - २ - प्रकाशन वर्ष - १९८४.

में रात के समय मिलती रहती है। दोनों एक दूसरे को खूब चाहते हैं, जीवन भर साथ रहने की इच्छा रखते हैं। परंतु रिश्तेदारी में भाई-बहन का नाता होने से विवाह नहीं कर सकते। दोनों का विवाह अन्यत्र निश्चित हो जाता है।

मधुरी का विवाह पूर्णिमा के दिन होता है। इस विवाह में उसका पिता खुरखुन अपनी औकात से भी अधिक खर्च करके मधुरी को बिदा कर देता है। विवाह के दिन ही उसकी डोली ससुराल जाती है। उसका ससुराल अंगारघाट के करीब है। उसका पति घर का एकलौता आज्ञाधारी बेटा है। परंतु ससुर बहुत ही नशाखोर है, हमेशा ताडी पीकर तर्र रहता है। उसका नशापान मधुरी को अच्छा नहीं लगता इसलिए वह उसे समझाने का प्रयास करती है। इसी के परिणाम स्वरूप पिता-पुत्र दोनों मिलकर मधुरी को मारपीट करने लगते है, गालियाँ सुनाते है, उसे कमरे में बंद करके रखते हैं। समय पर खाना नहीं देते। एक बार तो उसे ऐसा मारते हैं जिससे उसके सिर के पीछेवाले बाल भी टूट जाते हैं और पीठपर डण्डे के निशान काले-निले होकर रह जाते हैं। इस मारपीठ के कारण मधुरी आपने ससुरको राक्षस समझने लगती है। ससुर की इस नशाखोरी खुरापतों के कारण उसे पति के पास रहना मुश्किल हो जाता है। पति भी अपने बाप के भय से मधुरी के लिए कुछ नहीं कर सकता। बल्कि वह अपने बाप को सताने में मदद ही करता है। इस तकलिफ से तंग आकर एक दिन मधुरी भागकर अपने मायके आ जाती है।

परंतु मायके में भी वह पराया भाव अनुभव करने लगती है। उसकी माँ कभी उसके भाग आनेपर उलहना देती है तो कभी कभी उसपर गुस्सा उतारती है। पास-पडोस की स्त्रियाँ भी इसपर कुछ- न-कुछ ताने कसने लगती है। भोला मछुये की दादी तो उसे नारी कर्तव्य की याद दिलाते हुए कहती है -

"लात-बात बर्दाश्त करके भी लडकियों को अपने ससुराल में ही रहना चाहिए बेटा।" [1]

परंतु मधुरी इन परम्परागत मान्यताओं को अपने दुखद अनुभवों के कारण स्वीकार नहीं करती। वह उसके बिरादरी के नेता मोहन माँझी से प्रेरित होकर मछुआ संघ और किसान सभा का काम करना शुरु कर देती है, बाढ पीडितों के सहायता कार्य में बच्चों को खिलाने-पिलाने का काम करते हुए अपने दु:ख को भूलने का प्रयास करती है। परंतु यहाँ भी उसका दुर्भाग्य पीछा नहीं छोडता। क्यों कि उसका अन्य किसी व्यक्तियों से बोलना, उसपर बुरी नजर रखनेवाले कुछ युवकों को अच्छा नहीं लगता। वे युवक जान बुझकर बच्चों के लिए दिया जानेवाला दुध तथा खाने की चीजों को अपने लिए माँगते रहते हैं। मधुरी इस माँग का विरोध करती है इसलिए वे युवक मधुरी के संबंध में मोहन माँझी के पास शिकायत करते है कि मधुरी बच्चों के दुध में पानी मिलाकर देती है, और अच्छे दुध का कुछ हिस्सा अपने लिए रख लेती है। इस मिथ्या आरोप से मधुरी नाराज हो जाती है। परंतु मोहन माँझी द्वारा समझाने पर फिर कार्य में मग्न हो जाती है।

इस मदद कार्य में एक मेडिकल कॉलेज के छात्रों की टिम भी काम करती है। इस टिम में काम करनेवाली कुसुम कक्कड नाम की एक पंजाबी लडकी से मधुरी प्रभावित हो जाती है। दोनों की बातचीत से सहेलीपन बढने लगता है। इसी कारण अनजाने में मधुरी अपने दुर्भाग्य की कहानी कुसुम को सुनाती है। उसपर कुसुम उसे ऐसे अनमेल विवाह के बंधनों को और निष्क्रिय पति को भी अस्वीकार करने की प्रेरणा देती है। और कहती है -

"लात मार साले को, जब तेरा अपना घरवाला ही बोडम निकला तो ससुर की क्या बात करती हो।" [2]

---

१. नागार्जुन - वरुण के बेटे - पृ. ११५, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली-२, प्रथम संस्करण - १९८४.

२. --- वहीं --- पृ. ८९.

इस प्रेरणा से मधुरी तेज बनकर सामाजिक कार्य में अपने आप को निमग्न रखते हुए अपने वैवाहिक जीवन के दु:ख को भूलने का प्रयास करती है। परंतु जब वह मंगल के नवजात बालक को देखने आती है तब अपनी दुखद भाव तरलता और नवीन चेतना में संघर्ष अनुभव करती है -

"दिमाग में एक युवक मछुए का डरपोक चेहरा नाच उठा .... अपने बोडम पति का प्रभावहीन मुखडा ।.... अब वह कभी उस नशाखोर बुड्ढे की लात-बात बर्दाश्त करने नहीं जाएगी ... फिरसे शादी कर लेगी किसी दिलेर - नेकचलन और मेहनतकश जवान से ... और, बगैर मर्द के कोई औरत अकेली जिन्दगी नहीं गुजार सकती है क्या ? ... " [1]

वह अकेली रहना ही पसंद करते हुए घर के सभी बाजार-हाट के कार्य, मछली बेचना, पैसों के व्यवहार देखने लगती है। इसी कारण खुरखुन उसे लडकी नहीं लडका ही समझने लगता है। मधुरी मछुआ संघ और किसान सभा का कार्य तेज बनाने के लिए नारी जागरण का काम करती है, जमींदारों के विरोध में चले आंदोलनों में कैद हो जाती है। उसके सतेज कार्य को देखकर एक पुलिस अधिकारी आश्चर्य व्यक्त करते हुए पुछता है कि, एक औरत होकर तुम ऐसा काम केवल मोहन माँझी की चेतना से ही करती हो। इस पर मधुरी ऐसा मुँह तोड जवाब देती है, जिस में पुरूषों की सार्वभौमता झकझोर देती है -

"इसमें क्या हर्ज है हुजुर। जिन्दगी और जहान औरतों के लिए नहीं है क्या ? " [2]

---

१. नागार्जुन - वरूण के बेटे - पृ. १११, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली-२, प्रथम संस्करण - १९८४.

२. —— वहीं —— पृ. ११५.

नागार्जुन ने मधुरी का चरित्र प्रगतिशील दृष्टि से जरूर चित्रित किया है परंतु उसकी पार्श्वभूमि तो अनमेल विवाह के दुष्परिणामों की लगती है।

कुम्भीपाक -

१९६० में लिखित इस उपन्यास में चित्रित उम्मी की माँ जिसकी आयु चालीस सालकी है, देखने में नितांत सुंदर और मोहक है। उसकी शादी गोरखपुर के एक ऐसे व्यक्ति से हो जाती है, जो पैसे कमाने के लिए छ:-छ: महिनोंतक बाहर ही रहता है। जिसके कारण उम्मीकी माँ को शारीरिक सुख नहीं मिल पाता। जब वह घर आता हैं तब न उसके साथ कभी प्यार भरे दो शब्द बोलता है, न उसे घुमाने-फिराने ले जाता है, न उसकी भावनाओं की कदर करता है। बल्कि उसे केवल वंशवर्धन का साधन मानकर ही उसके साथ व्यवहार करता है। इसी कारण उम्मी की माँ मन ही मन अपने पतिपर नाराज रहती है। धीरे-धीरे वैवाहिक सुख की अतृप्ति बढती जाती है। उसे तीन बच्चे होते हुए भी गृहस्थी में निरसरता महसूस होने लगती है। उसकी बडी लडकी उम्मी जो, सोलह साल की है। उसे ड्रॉईंग सीखाने के लिए महिम नाम का एक कमर्शिअल आर्टिस्ट आता है, वह देखने में काफी सुंदर है, उसका अपना परिवार है, उसकी पत्नी और बच्चे गाँव में रहते हैं। उसकी सुंदरता के कारण ही उसपर सोलह वर्षीय उम्मी मोहित होती है, उसकी निकटता बढती है, परिणाम स्वरूप उम्मी गर्भवती होती है। इसलिए उम्मी की माँ उसके पति का विरोध होते हुए भी गंगा के किनारे बाबा बूढनाथ के मंदिर में उन दोनों की शादी करा देती हैं और भूजागंज में किराये पर मकान लेकर तीनों रहने लगते हैं। रात्री के समय जब उम्मी और महिम की प्रणय लीलाएँ चलती रहती हैं, चुडियों की खन खन उम्मी की माँ निकट के कमरे में सुनती है। जिससे वह शरीर सुख पाने के

लिए इतनी व्याकुल हो जाती है कि वह अपने आप को रोक नहीं पाती। उम्मी सो जाने के बाद वह महिम को जबरदस्ती खींच लाती और अपनी वासना पूर्ति शांत कर देती है। इस संबंध में वह स्वयं कहती है –

"मेरे अन्दर की प्यासी चुडैल का जंगली नाच शुरु हो जाता है... वासना की विकट आँच में झुलसी हुई राक्षसी उस मर्द को मथने लगी .... मथ कर छोड देती है .... अतृप्त लालसा की यह ताण्डव लीला हर रात चलती है।"[1]

परंतु एक दिन उम्मी अपने सुहाग के साथ अपनी माँ की करतुत देखकर इतनी घृणित हो जाती है कि वह अपने पति को छोडकर पिता के पास चली जाती है। इसी कारण उम्मी की माँ अपने पति को मुँह दिखाने लायक नहीं रह जाती। महिम का प्रेम पाश उसे अधिक प्रिय लगता है। वास्तव में उन दोनों में सास और दामादका रिश्ता होते हुए भी वे दोनों अपने आप को गत जन्म के पति-पत्नी मानकर रहने लगते हैं। एकबार वह महिम से कहती है –

"मैं तुम्हारी हूँ... तुम्हारे लिए ही मेरा जन्म हुआ था। तुम मुझ से आठ वर्ष के बाद हुए थे न ? तो क्या हुआ ? वासना की कोई उम्र नहीं होती। जो प्यार को आयु के गज से नापते हैं उन जैसा कमगज दुनियां में भला और कौन होगा ?"[2]

इस प्रेम की नशा के कारण महिम अपनी सुद-बुध खो बैठता है और शराब पिना शुरु कर देता है, सिगार पीने लगता है। परिणाम स्वरूप

---

१. नागार्जुन – कुम्भीपाक – पृ. ७१, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली – २, प्रथम संस्करण – १९८५.

२. —— वहीं —— पृ. ६९.

उसका आर्टिस्ट का काम धीरे-धीरे बंद होने लगता है, जिससे उसकी आय कम हो जाती है, इसलिए वह ताश खेलना, जुआ खेलना शुरु कर देता है। उसके मन में उम्मी की माँ के प्रति पुरुषी अहंकार निर्माण हो जाता है। वह उम्मी की माँ को बिना इजाजत कहीं भी नहीं जाने देता। कभी कभी नशे में उसे मारने लगता है। एक बार उसने ऐसा मारा कि जिससे उम्मी की माँ ने सिर में गहरी चोट आती है, दो दाँत टूट जाते हैं। परंतु उम्मी की माँ उसकी मारपीट और गालियाँ सहती रही। धीरे धीरे वह हमेशा उसे मारपिट करने लगता है। उसकी गालियाँ और मारपीट सहकर भी उसे बहलाने का वह प्रयास करती है। उसकी इच्छा के अनुसार सब कार्य करती रहती है। यह दु:ख वह अपने पडोसी कम्पाउडर की पत्नी के पास व्यक्त करती है। देखिए -

" .... और एक मैं हूँ, रोज लात खाती हूँ ... कभी इन रगो में भी ताजा लहू दौडता था, अब तो बस दुर्गंध और बासा पानी भर गया है इनमें ... उस हुक्के का पानी जिससे कई होंठ अधा गए हो। " [१]

अधिक शराब पीने से और वक्तपर न खाने-पीने से महिम एक दिन बीमार पड जाता है, उसे निर्धनता सताने लगती है। इसलिए उम्मी की माँ सिलाई मशिनपर पास पडोस के लोगों के फटे पुराने और कुछ छोटे-मोटे कपडे सिलाकर पैसे कमाने लगती है, बाहर भी कहीं काम ढूँढती रहती है। महिम बीमारी के कारण अधिक खिजता रहता है, इसलिए वह उसके घरवालों को बुला लेती है और महिम को समझाते हुए देहाती हवा खाने के लिए भेज देती है। जिससे वह स्वयं अपने किए हुए कर्मपर पश्चाताप दग्ध बनती हैं। महिम जाने के बाद वह अकेली रह जाती है। उसे अपने किये हुए कर्मपर पश्चाताप हो जाता है, इसके बारेमें वह कहती है -

---

१. नागार्जुन - कुम्भीपाक - पृ. ६५, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली-२, प्रथम संस्करण - १९८५.

"उम्मी के सामने कौनसा मुँह लेकर जाऊँगी ? वह कभी मुझे क्षमा नहीं करेगी ... । मैं बाबूजी [पति] से उतना नहीं डरती जितना इस छोकरी से ... अब तो मेरे प्रति घृणा और भी गहरी हो गई होगी.." [१]

पारो -

सन १९७५ में प्रकाशित यह उपन्यास मैथिली भाषा में लिखित "पारो" का हिन्दी रूपान्तर है।

पारो पंडित पीसा की लडकी है। उसकी माँ प्रतिभामा ने उसे बाबा वैधनाथ की मनौती के रूप में पाया है। पीसा उसे बहुत लिखाना-पढाना चाहते थे परंतु उसकी माँ लडकियों के सीखने-पढने पर नाराजी व्यक्त करती है जिसके कारण वह अल्पशिक्षित ही रह जाती है। वह देखने में काली-कलूटी जरुर है परंतु बहुत ही संस्कारशील और सुझ-बुझवाली लडकी है। वह अपने ममरे भाई बिरजू से बचपन से ही अत्यंत स्नेह रखती है और वह उसी के साथ शादी की इच्छा भी करती है। जब वह तेरह साल की हो जाती है तब उसे पितृ छाया से वंछित होना पडता है, जिससे उसकी माँ उसके भविष्य को लेकर अधिक चिन्तित हो जाती है।

इस उपन्यास मे चित्रित लूच झा जो पीसा का बहनोई है, एक धूर्त व्यक्ति है। वह सौरठ मेले में पैसे की लालच में घटक का कार्य करते हुए अनेक अबोध कन्याओं को अयोग्य वरों के पल्ले बांधकर लावारिस धन की जड काटने में बहादुर है। ऐसे धूर्त व्यक्ति की सहायता से पारो की माँ पारो के लिए वर संशोधन में सफलता पाती है। लूच झा पारो के

---

१. नागार्जुन - कुम्भीपाक - पृ. १०५, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली - २, प्रथम संस्करण - १९८५.

लिए पैंतालीस वर्षीय दुल्हाई चौधरी को वर निश्चित करता है। जिसकी पहले दो शादियाँ हो चुकी थी। उसकी पढाई-लिखाई मामुली है परंतु जमीन जायदाद काफी है। घर में सौतेली माँ और एक सौतेली बहन भी है। इस विवाह निश्चिती के बदले लूच झा को घटकैती के रूप में पंद्रह रुपये नकद, एक जोडी धोती और दो मन चावल मिलता है।

इस शादी में पारो की माँ निर्धन होते हुए भी बडी खुशी से जितना हो सके उतना अधिक खर्च कर बेटी की शादी की चिन्ता से मुक्त होकर उसके भविष्यपर आशा लगाकर बैठ जाती है।

दोनों का विवाह तो हो जाता है परंतु दोनों के मन एक नहीं हो पाते क्यों कि चौधरी अपनी वासना पूर्ति के लिए पारो को एक साधन मानता है। वैसे तो चौधरी प्रौढता के अन्तिम कगार पर खडा पथिक है, जिससे वह पार्वती को न तो मानसिक रूप से संतुष्ट कर पाता है, न शारीरिक दृष्टि से। इसलिए तो वह सुहाग रात्री में अपनी वासना पूर्ति के लिए पारो पर जबरदस्ती करता है। जिससे पारो शारीरिक वेदना और पाशवी अनुभव से भयाकुल होकर रोने लगती है, तब चौधरी उसके सामने दस-दस के दस नोट फैलाकर उसे चुप करवाना चाहता है। उसकी दृष्टि में स्त्री के लिए धन ही सब कुछ है ऐसा मानकर वह उसके साथ व्यवहार करता है। जिससे पारो उसे "पति" नहीं "पशु" या "राक्षस" मानने लगती है।, जैसे जंगल में कोई उन्मत्त बारहसिंगा अपने तेजधार सिंग से कोमल फूलों को कुरेदता है।

वह अपनी वासना पूर्ति के लिए कभी-कभी भंग पीकर भी आता है। और वासना पूर्ति के लिए जबरदस्ती करता रहता है, जब वही राजी नहीं होती तब वह उसे जबरदस्ती पकडकर - कसकर शरीर सुखा लेता रहता है तब पारो को अत्यंतिक शारीरिक वेदना और खून पात सहना पडता है।

उसका यह अत्याचार देखाकर वह कहती है -

"जिन्हे आप चौधरी कहते हैं, उनसे मेरा संबंध ही क्या है ? पति-पत्नी का संबंध ? नहीं, हरगिज नहीं,... चतुर्थी के रात में ..... पैंतालीस वर्षों का परपिशाच एक अबोध लडकी के सामने दस रुपयों के नोटों का ढेर इसलिए लगावे कि ...." [1]

वह उससे कभी प्यार के दो मिठे शब्द भी नहीं बोल सकता, जिससे पारो मनही मन टूटने लगती है, निराश हो जाती है। इसी निराशा में वह अपने ममेरे भाई बिरजू से कहती है -

"जोर-जबर्दस्ती कोई किसी के शरीर पर ही केवल कर सकता है। मन पर कतई नहीं। वैसे आप ही कहिये कि जहाँ पचास वर्ष के वर की पत्नी पन्द्रह साल की होती हो वहाँ सौमनस्य कैसे सम्भव है ? " [2]

इतना अत्याचार होने पर भी वह अपनी माँ और ममेरे भाई बिरजू को दुःख न हो जाय इसलिए चुपचाप सब सहती है। परंतु इतने पर ही उसका यह दुःख समाप्त नहीं होता उसकी सौतेली सास भी अपने बेटे से पीछे नहीं रहती। वह घर के कामों में उसे संत्रस्त कर देती है, उसे जीना दूभर कर देती है। वह अपनी सास के व्यवहार के बारे में कहती है -

"सास जो ये हैं सो सगी नहीं ... ऐसी किलापी औरत आपने तो जरुर ही नहीं देखाी होगी। पहले दस दिन तो ऐसा लगा कि अपनी माँ से भी यह बढकर होगी मेरे लिए। मगर उसके बाद जो रंग-ताल देखाने

---

१. नागार्जुन - पारो - पृ. ३७, यात्री प्रकाशन, दिल्ली - ९४, संस्करण - १९८७.

२. ---- वहीं ---- पृ. ६१.

में आने लगे, सो क्या बतावें। मगर मैं भी ऐसी जो धरती की तरह सभी उत्पाद सह लेती हूँ। उपाय भी क्या है ? "[1]

इसी मानसिक दयनीयता में वह गर्भवती हो जाती है। वास्तव में मातृत्व में ही स्त्री अपने जीवन का साफल्य मानती है। परंतु पारो पति की ओर से असंतुष्ट और उसके पाशवी व्यवहारों से भयभीत होने के कारण वह अपने गर्भको भी तिरस्कृत भावसे ही देखाती है। गर्भ में पलनेवाले सुप्त जीव को वह "राक्षस" या "राक्षसी" कहने लगती है। इन सारी वेदनाओं को उंडेलते हुए बिरजू भैया को कहती है -

"ऐसा आशीर्वाद मुझे दिए जाईये बिरजू भैया कि अगले जन्म में यह नरक न भोगना पडे .. मेरे और आप के बीच ममेरे - फुफेरे का संबंध नहीं, उस जन्म में मैं और आप .."[2]

अपने अनमेल विवाह की यातनाओं के कारण वह विद्रोही स्वर में युगों-युगों से नारी जाति पर किए पुरुष जाति के अत्याचारों से छुटकारा पाने के लिए भगवान से प्रार्थना करती है। -

"हे भगवान ! लाख दण्ड दें। मगर फिर औरत बनाकर इस देश में जन्म नहीं दें - "[3]

इतना ही नहीं ऐसे नारकीय वैवाहिक जीवन से उबकर सोचती है कि, ऐसे विवाह कर देने के बजाय माँ-बाप अपनी बेटी को जहर दे तो अच्छा है। पारों कहीं भारतीय परम्परावादी पत्नी की तरह परिस्थितियों से समझोता नहीं करती। केवल मृत्यु की प्रतिज्ञा करती है और उसके

---

१. नागार्जुन - पारो - पृ. ६१, यात्री प्रकाशन, दिल्ली-२४, संस्करण - १९८७.

२. ---- वहीं ---- पृ. ६८.

३. ---- वही ---- पृ. ३७.

दु:खमय जीवन का अन्त भी प्रसुती में ही हैा जाता है।

ब]　　बहुविवाह समस्या -

भारतीय समाज में बहुविवाह की प्रथा प्राचीन काल से प्रचलित है। वैदिक काल में तथा स्मृति ग्रंथों में कुछ शर्तोंपर बहुविवाह की अनुमति दी हैं - जैसे पहली पत्नी रोगिणी अथवा वंध्या होने पर पुरुष दूसरा विवाह कर सकता है। प्राचीन काल में राजा महाराजा तथा धन संपन्न लोग अपने राजनीतिक संबंधों को बनाए रखने के लिए तथा अपने भोग-विलास की दृष्टि से अनेक पत्नियों का होना ठीक समझते थे।

वैसे ही स्त्री को धर्म से पैतृक संपत्ति का उत्तराधिकारी न मानने के कारण पुत्र प्राप्ति की लालसा के नामपर पुरुष को अनेक विवाह करने का अधिकार मिल गया था। विशेषत: सामन्ती युग में भोग-विलास तथा वासना पूर्ति के लिए अनेक विवाह करने का प्रचलन हुआ और नारी को मनोविनोद का साधन या भोग्य वस्तु माना जाने लगा। जिससे नारी का जीवन कष्टमय और दु:खदायी बनता गया।

इस प्रथा के कारण समाज में अनेक समस्याओं का जन्म हुआ। नारीका शोषण होने लगा, उसे वैधव्य की पीडा सहना अनिवार्य हो गया, जिसके कारण समाज में अनैतिकता और भ्रष्टाचार को आश्रय मिल गया। इस संदर्भ मे डॉ. कमल गुप्ता का कथन है -

"बहु विवाह की प्रथा ने समाज में विधवा की समस्या को अधिक भयंकर बनाया एवं विधवा के रूपमें नारी शोषण के अनेक आयाम प्रस्तुत किये गये।" [१]

१.　　डॉ. कमल गुप्ता - हिंदी उपन्यासों में सामन्तवाद - पृ. १४६, अभिनव प्रकाशन, नयी दिल्ली - २, प्रथम संस्करण - १९८९.

नागार्जुन ने मिथिला जनपद में प्रचलित बहुविवाह की प्रथा के कारण स्त्रियोंपर होनेवाले अत्याचार एवं बंधनों से ग्रस्त नारी जीवन को अपने "रतिनाथ की चाची" और "पारो" इन दो उपन्यासों में चित्रण किया है।

रतिनाथ की चाची -

१९४८ में प्रकाशित "रतिनाथ की चाची" इस उपन्यास में उपन्यासकार ने विधवा समस्या के साथ-साथ बहुविवाह समस्या के बारे में भी जिक्र किया है। शुभंकरपुर का निवासी भोला पण्डित, जिसकी आयु सत्तर साल की हो चुकी है। जीवन की इस लम्बी यात्रा में वह अपनी पण्डिताई और धार्मिक ग्रंथों के पारायण के लिए एवं पूजा-अर्चा के लिए शुभंकरपुर के जमींदार राजा बहादुर दुर्गानिंदनसिंह से लेकर बनैली के राजा की कीर्त्यानंदसिंह तक और भागलपुर के सब से धनी मारवाडी रायबहादुर भोलीराम जयपुरिया तक ख्याती प्राप्त कर चुका है।

परंतु दो पत्नियाँ होते हुए भी वह गृहस्थी में अपने बालबच्चों का सुख प्राप्त नहीं कर सका। पहली पत्नी को अनेक बरसोंतक संतान न हो सकने के कारण वह अपनी पैंतालीस बरस की आयु में पुत्र प्राप्ति की लालसा से दूसरी शादी कर लेता है। दूसरी पत्नी से एक लडकी और एक लडका तो हो जाता है लेकिन लडका नौ महिने के बाद भगवान को प्यारा हो जाता है। इसके बाद उसे कोई सन्तान नहीं होती।

दूसरी शादी तो हो जाती है लेकिन पहली पत्नी और दूसरी पत्नी [रामपुरवाली] में सौतेलेपन का मत्सर भाव होने के कारण दोनों बात-बात पर मुर्गियों की तरह आपस में लडती रहती हैं। झगडे से तंग आकर पहली पत्नी पाँच सालतक अपने मायके चली जाती है।

भोला पंडित और रामपुरवाली में भी घरेलु मामलों को लेकर कहा सुनी होती रहती है। रामपुरवाली भोला पंडित को हमेशा डाँटती

फटकारती रहती है। जिसके कारण पंडित क्रोधित होकर उसकी चोटी पकडकर लाते लगवाता है तब वह जोर-जोर से चिल्लाते हुए पति को गालियाँ देती रहती है।

यह देखकर पंडित पछताता है और अपने नसीब को दोष देते हुए कहता है -

"पूर्व जन्म में बहुत बडा प्रत्यवाय मैंने किया होगा, जिससे रामपुर में अवतार लेनेवाली यह चंडी मेरे घर आ गई ... ।" [१]

दूसरे विवाह से उसे पुत्र प्राप्ति तो नहीं होती परंतु घर की शांति चली जाती है। अत: वह अपने आप को धार्मिक कार्य में और पूजा-अर्चा में मग्न रहने लगता है। साथ ही हर साल तीर्थ-यात्रा तथा अनुष्ठान या रिश्तेदारी के निमित्त दरभंगा, मुँगेर, भागलपुर, पूर्णिमा आदि स्थानों में चार-छ: महिनों तक घर के बाहर ही रहने लगता है।

दूसरी पत्नी की बेटी बागो जब तेरह साल की हो जाती है तब रामपुरवाली उसे बिना पूछे ही अपने भाई की मदद से काशी के एक बीस वर्षीय साहित्यशास्त्री से शादी करा देती है। दामाद की विदाई के समय भी दोनों में झगडा हो जाता है। भोला पंडित दामाद को सौ से अधिक खर्च नहीं करना चाहता, यह बात रामपुरवाली नहीं मानती। वह अपनी इच्छा के अनुसार अधिक से अधिक खर्च कर डालती है। इस अपमान से भोला पंडित रुठकर तीन महिनों तक दरभंगा चला जाता है।

बुढापे में क्लेषदायी और अपमानित जीवन जीते-जीते वह मलेरिया की बीमारी के कारण उन्नीस दिनों तक बुखार में उबलकर स्वर्ग सिधार जाता है।

---

१. नागार्जुन - रतिनाथ की चाची - पृ. ६२, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली - २, प्रथम संस्करण - १९८५.

उसकी यह हालत देखकर स्पष्ट हो जाता है कि पुत्र लालसा की इच्छा से दूसरी शादी तो कर लेता है, लेकिन उसे ना पुत्र की प्राप्ति हो जाती है, ना पत्नी का सुख मिलता है और न घर में शांति।

पारो -

१९७५ में प्रकाशित "पारो" इस उपन्यास में उपन्यासकार ने अनमेल विवाह समस्या के साथ-साथ बहु विवाह समस्या के बारेमें भी जिक्र किया है। केरबनिया निवासी लूच झा अपनी पण्डिताई और पूजा-अर्चा के कारण एक सज्जन व्यक्ति कहलाता है परंतु सौरठ के विवाह मेले में बिचौले का काम करते हुए लावारिस धन की प्राप्ति करने में निष्णांत बन जाता है।

उसे दो पुत्रियाँ होते हुए भी गृहस्थी जीवन में पुत्र प्राप्ति की लालसा अधूरी ही रह जाती है। उसकी पहली पत्नी, जो ककरोड गाँव के कुलीन ब्राम्हण घर की बेटी है, संस्कारशील और समयी स्त्री है। उससे कन्या प्राप्ति के बाद बहुत लम्बे अर्सेतक पुत्र नहीं होता इसलिए बुढापे में पुत्र प्राप्ति की लालसा में दूसरी शादी मटकुडिया गाँव के निम्न कुलीन और संस्कारहीन ब्राम्हण की बेटी से कर लेता है। दूसरी पत्नी घर तो आ जाती है। लेकिन वह अत्यंत ईर्ष्यालू होने के कारण घरमें महाभारत मचा रहता है।

दोनों सौत में छोटी-छोटी बातोंपर हमेशा झगडा हुआ करता है, जिससे मुहल्ले के लोग तंग आ जाते हैं। एक दिन की बात है वे दोनों एक छोटी सी बात को लेकर झगडने लगती हैं जिसे देखकर मुहल्ले के लाग दंग रह जाते हैं। क्यों कि लूच झा की दूसरी पत्नी ऐसे भयंकर गालियों का वेद पाठ बकना आरंभ करती है, जिसे सुनकर सारा गाँव गुँज उठता है। इस झगडे को देखकर लूच झा दोनों पत्नियों को दो दो लाठियाँ लगवाता है तब मटकुडि-यावाली ऐसे जोर जोर से चिल्लाने लगती है देखिए -

BARR. BALASAHEB KHARDEKAR LIBRARY
SHIVAJI UNIVERSITY, KOLHAPUR

"मर गयी ऐ मामी .. .. मर गयी ऐ मामी .."[1]

उसका चिल्लाना सुनकर उसके पडोस में रहनेवाली पारो की माँ प्रतिभामा दौडकर आती है और उन दोनों को समझाती है तब कहीं उनका झगडा बंद हो जाता है। कभी-कभी ये दोनों सौत दिन भर आपस में झगडेके बगैर कुछ करती ही नहीं थी। जिसके कारण लूच झा को खाना भी नसिब नहीं होता था, दिन भर भूखा ही रहना पडता था।

अत: यह स्पष्ट हो जाता है कि लूच झा पुत्र प्राप्ति की लालसा से शादी तो कर लेता है लेकिन, उसे पुत्र प्राप्ति नहीं होती. बल्कि घर में कुरुक्षेत्र मच जाता है।

क] जरठ विवाह समस्या -

जरठ विवाह का अर्थ है वृध्दावस्था में या बुढापे में किया हुआ विवाह। इस विवाह में पति वृध्द और पत्नी किशोरी या युवती होती है। अर्थात् इस विवाह के पीछे भी पुत्र प्राप्ति की लालसा या असीम कामेच्छा पूर्तिकी भावना या उच्च कुलीन कन्या का पाणिग्रहण करने की भावना ही प्रमुख रही है। जिससे पुरुष अपने वृध्दत्व में कली जैसी कोमल तथा अबोध कन्या से विवाह करता है, चाहे वह पत्नी पति के लिए बेटी के समान ही क्यों न हो। ऐसे विवाह निर्धनता तथा इच्छित दहेज न द सकने के कारण माँ बाप अपनी बेटी को अयोग्य तथा वृध्दों के हाँथ सौंप देते हैं।

इस विवाह के कारण नारी जरठ विवाह जन्य कटुताओं को झेलते हुए, चाहे-अनचाहे रूप में अपने जीवन की बाग-डौर खिंचते समय कभी विवाह

---

१. नागार्जुन - पारो - पृ. ३५, यात्री प्रकाशन, दिल्ली - ९४, संस्करण - १९८७.

के एक दो वर्ष बाद ही वैधव्य जीवन को प्राप्त कर लेती है, कभी जरठ पति से वैवाहिक जीवन का सुख न मिलने के कारण अनैतिक संबंधोंकी शिकार हो जाती है। तो कभी वैधव्य के कठोर नियमों से अपनी इच्छाओं को दमित करते हुए जीती है।

इसका चित्रण नागार्जुन ने १९४८ मे लिखित 'रतिनाथ की चाची' इस उपन्यास में किया है।

रतिनाथ की चाची -

मेवालाल ठाकुर बडहडवा गाँव का बहुत बडा काश्तकार और धनी व्यक्ति है। उसकी पहली दो शादियाँ हो चुकी है और दोनों स्त्रियाँ जीवित भी हैं। उनमें से एक को चार और दूसरी को सात सन्ताने होते हुए भी पचास वर्ष की आयु में उस के मन में किसी कुलीन कन्या के साथ शादी करने की सनक सवार हो जाती है।

उसकी यह इच्छा उसके एक मित्र के व्दारा जयनाथ के पिता को मालुम हो जाती है। उसकी धन सम्पदा देखकर जयनाथ का पिता अपनी निर्धन स्थिति में यह संबंध स्वीकार करने के लिए तैयार हो जाता है। और अपनी सोलह वर्षीय कन्या सुमित्रा का उसके साथ विवाह निश्चित कर देता है।

इस विवाह में मेवालाल ठाकुर सुमित्रा के पिता को दो सौ रानी छाप के रुपये नकद, सौ मन कनकजीरा चावल, पन्द्रह मन अरहर की दाल, दो मन घी, पाँच गाँठ कपडा आदि देता है। सुमित्रा के लिए भरपूर गहने भी देता है। मेवालाल की कृपा से गरीब ब्राहमण का घर भर जाता है। और इस तरह मेवालाल का सुमित्रा के साथ बडे धुमधाम से विवाह हो जाता है वह अपने साथ सुमित्रा को बडहडवा ले आता है। सुमित्रा भी

अपने ससुराल में अपनी सौत के साथ अच्छा बर्ताव करते हुए रहने लगती है।

परंतु एक पुत्र प्राप्ति के बाद वह विधवा हो जाती है। विधवा हो जाने के बाद उसे नैष्ठिक ब्रह्मचर्य का अत्यंत कठोरता से पालन करना पडता है। वह न कभी रंग-बिरंगी या किनारवाली साडी पहनती है, न पान खाती है, न दाँतों में मिश्री लगाती है, न गहने पहनती है और न तीर्थ यात्रा करती है। वह केवल एक मार्किन की सफेद पतली धोती पहनती है, माथे पर गंगा की मिट्टी का टिका लगाती है और गले में छोटे छोटे रुद्राक्षों की माला पहनती है। व्रत, उपवास और निरिमिष अहार से अपने स्वास्थ को काबू में रखती है।

उसके इस वैधव्यपूर्ण कठोर नियमों से युक्त जीवन को देखने पर यही अनुभव होता है कि आर्थिक निर्धनता के कारण जरठ विवाह को स्वीकारनेवाली सुमित्रा अपनी भाव-भावनाओं को किस तरह कुचल डालती है और सारी जिन्दगी वैधव्य में बिताती है।

इसका यथार्थ चित्रण इस उपन्यास में मिलता है।

ड] -विधवा विवाह समस्या -

भारतीय समाज में विधवा नारी के विवाह को स्मृति पुराण आदि में स्वीकार किया गया था। इस संदर्भ में डॅा. प्रीति प्रभा गोयल का कथन है -

"रामायण एवं महाभारत के युगमें आर्य जाति की संस्कृति एवं परंपरा का आर्येतर जातियों की संस्कृति से संघर्ष एवं सम्मिलन हो रहा था। उन आर्येतर जातियों में एक पति के रहते दूसरा पति कर लेना

अथवा विधवा का पुनर्विवाह निषिध्द नहीं था। "[1]

हिंदु नारीका चित्र अत्यंत उदासीन, नीरस एवं दुःखमय तथा यंत्रवत काम करनेवाली स्त्रीका है। नाते रिश्तेदारों के दुर्व्यवहार अथवा असहाय अवस्था में जीवन जीना ऐसी स्त्रीको दुभर बना देता है। इसी असहायता से ऐसी कितनी ही विधवाएँ या तो पतित होकर मुँह काला कर लेती है या तो लापता होकर कुँए या तालाबकी भेंट चढ जाती हैं।

इस पर डॉ. शील प्रभा वर्मा का कथन है -

"हिन्दु संस्कृति की यह एक विडम्बनाही है कि पत्नी के मरने के पश्चात् पति का दूसरा-तीसरा विवाह करने की सुविधा है। किन्तु पति के मृत्यु के पश्चात् पत्नी दूसरा विवाह नहीं कर सकती। "[2]

सच तो यह है कि विधवा नारी की भी अपनी कामनाएँ होती हैं और यदि वे स्वयं को सीमाओं में बांधना चाहे तो भी समाज उसे ऐसा नहीं करने देता। असामाजिक तत्वोंसे कटती बचती, विधवा नारी कहीं न कहीं ऐसे जाल में फँसती है जिससे बाहर निकलना उसे मुश्किल हो जाता है।

नागार्जुन ने बिहार मिथिलांचल के रुढीवादी समाज में विधवाओं का कष्टमय जीवन देखा है, परखा है। इसलिए उन्होंने अपने "कुम्भीपाक" और "उग्रतारा" इन दो उपन्यासों में विधवा विवाह समस्या का यथार्थ चित्रण प्रस्तुत किया है।

---

१. डॉ. प्रीति प्रभा गोयल - हिंदु विवाह मिमांसा - पृ. १६९, राजस्थानी ग्रंथागार, जोधपुर, संस्करण १९८०.

२. डॉ. शीलप्रभा वर्मा - महिला उपन्यासकारों की रचनाओं में बदलते सामाजिक ,सामाजिक संदर्भ - पृ. ७३, विद्याविहार - प्रकाशन, कानपुर - १२, प्र. सं. १९८७.

कुम्भीपाक

१९६० में लिखित इस उपन्यास में उपन्यासकारने वेश्या समस्या के साथ साथ विधवा विवाह समस्या को भी चित्रित किया है।

इस उपन्यास की चम्पा एक अच्छे घर की लाड प्यार में पली लडकी है, उसकी पढाई - लिखाई तो मामुली है। सोलह वर्ष की आयु में उसकी शादी एक अच्छे युवक के साथ हो जाती है। परंतु विवाह के दो वर्ष बाद उसके पति की मृत्यु हो जाती है। वैधव्य में वह कभी ससुराल में सास और देवर-देवरानी के साथ तो कभी अपने मायके में माँ के साथ रहने लगती है। कुछ दिनों बाद उसकी दीदी की चेचक की बीमारी में मृत्यु हो जाती है इसलिए उसके बालबच्चों की निगरानी रखने के लिए और घर के काम सम्भालने के लिए जीजी के घर जाना पडता है। यहीं से उसके कर्म कहानी शुरु हो जाती है। जीजा चम्पा का तारुण्य देखकर मचलने लगता है। उसकी माँ घर में होते हुए भी किसी - न - किसी बहाने चम्पा को पास बिठाकर बोलता रहता है - कभी चाय के निमित्त, तो कभी खाने के समय वह ऐसी मीठी बोली बोलता रहता है कि जिससे चम्पा भी बहकने लगती है। वह पहले चम्पाके दिल को छू लेता है और आहिस्ता-आहिस्ता शरीर को भी। चम्पा वासना की लपेट में आ जाती है। यह सब देखकर चम्पा की माँ और सास उसके जीजा को चम्पा के साथ विवाह कर लेने का सुझाव रखते हैं। जिससे वह लडखडा जाता है, कुछ न कुछ कारण कहते हुए टालता रहता है। यह देखकर स्वयं चम्पा ही एक दिन स्पष्ट रुप से उसके सामने विवाह का प्रस्ताव रखती है तब वह बेचैन होकर माँ के नाम पर उस प्रस्ताव को अस्वीकार करते हुए कहता है -

"अगर माँ का डर न होता तो निश्चय ही मैं तुमसे शादी कर लेता। माँ को मैं ईश्वर से अधिक मानता हूँ चम्पा, माँ की रुचि और अनुकूलता पर मैं ने अपनी पसंद को कभी नहीं लादा .." १

चम्पा उसकी मिन्नते करती है कि माँ तो कुछ दिनों की साथी है, वह मुझे स्वीकार करने पर रंज नहीं करेगी। उसके बाद हमें आसानी से वैवाहिक जीवन का सुख मिलेगा। परंतु इन मिन्नतों का उसपर कुछ असर नहीं होता।

उससे इन्कार मिलते ही वह दूसरे दिन अपनी माँ के पास चली आती है। परंतु इस घटना के बाद उसके जीवन में काफी परिवर्तन हो जाता है। माँ के पास रहते हुए उसी गाँव के सफदर नामक खाटिक के नव जवान की ओर वह आकर्षित हो जाती है। यह आकर्षण धीरे-धीरे प्रेम में बदल जाता है। अपने प्रेम को सफल बनाने के लिए वे दोनों पूर्वी पाकिस्तान में मैमनसिंह गाँव भागकर आते हैं। वहाँ जाकर वह होटलका धंदा करने लगता है। आमदनी भी अच्छी होती है। वह चम्पा का नाम कुलसुम रखता है। उसके लिए अच्छे कपडे और गहने लाने लगता है। बिना विवाह किए भी उनकी गृहस्थी फलने - फूलने लगती है। चम्पा को एक लडकी और एक लडका हो जाता है। तब सफदर की माँ अपने बेटे की संतान देखने के लिए उसके यहाँ आ जाती है। परंतु सफदर पैसों की ऐंठ और दोस्तों की खातीर हररोज शराब पीना शुरु करता है। इस पर चम्पा के मना-करने पर उसे गालियाँ देना और मारपीट करना शुरु करता है। उसका यह क्रम दिन-ब-दिन बढता ही रहता है। इससे चंपा तंग आ जाती है और अपने किये पर पछतावा करते हुए कहती है -

---

१. नागार्जुन - कुम्भीपाक - पृ.८९ , वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली-२- प्रथम संस्करण - १९८५.

" .. हे भगवान, कौन सा पाप किया था पहले जनम में कि राक्षस के साथ भाग आने की कुबुध्दि मन में आई। - " [१]

इसीतरह चार साल बीत जाते है। एक दिन अचानक पटना से सफदर के नाना मरने का तार आ जाता है। तब सफदर, चम्पा, सफदर की माँ और बालबच्चे पटना जाने के लिए रेल से निकलते है। कटिहर जंकशान पर सफदर उन्हें छोडकर कहीं जाता है, तो वापस नहीं आता। यह देखकर चम्पा पेशाब जाने के बहाने बच्चों को सफदर की माँ के पास छोडकर भाग जाती है। इस समय उसका मातृ ह्दय व्दंव्द स्थिति निर्माण करता है परंतु मनमुटाव के साथ हावडा पहुँचती है। वहाँ भीख माँगकर गुजारा करने लगती है। उसे भीख माँगते हुए देखकर तीन सीक्ख सरदार उसके रूप पर आसक्त होकर उसे खाना पकाने का काम देते हैं। उनमें से एक सरदार उसे से शारीर संबंध स्थापित कर देता है। वह चम्पा को सतवन्त कौर नाम देकर सरदारीन बना देता है। परंतु कुछ ही दिनोंबाद वह सरदार भी किसी बंगाली लडकी के लफडे में पडकर वह चम्पा को छोडकर गायब हो जाता है।

इसी हालत में वह हावडा में घुमती रहती है। तब उसे शार्मा नाम का एक व्यक्ति मिल जाता है। जो स्त्रियों का विक्रय करनेवाला दलाल था। वह उसे हमदर्दी दिखाकर काम दिलवाने का वचन देता है। इतना ही नहीं वह उसके साथ "एक रिश्ते की बहन" मानकर रहने का अनुनय करता है। इस बातपर चम्पा विश्वास करती है और उसके साथ जाने के लिए तैयार हो जाती है। लेकिन वह उसे वेश्यालय में ले जाता है। यहाँ समाज का आया हुआ अनुभव देखकर भी वह शार्मा के आश्रय में रहना निश्चित कर देती है। उसके नारी विक्रय के व्यवसाय में "बुआ" नाम से

---

१. नागार्जुन - कुम्भीपाक - पृ.९१, वाणी प्रकाशान, नयी दिल्ली-२- प्रथम संस्करण - १९८५.

काम करने लगती है। इस संबंध में चम्पा कहती है -

"मैं अपने प्रति शर्मा जी के अन्दर गाढी ममता पाती हूँ। उन्हे प्राणेश्वर या जीवन धन तो मैं शायद ही कभी कह सकूँ किन्तु मेरे आश्रयदाता और प्रतिपालक अवश्य है। मैं बहुत भटक चुकी हूँ, अब विश्राम चाहती हूँ .." [१]

अपनी असहाय और बेबसी पूर्ण जिन्दगी की यातनाएँ सहती हुई जीनेवाली चम्पा अपनी सभी भाव-भावनाओं की बलि देकर शून्य भावसे अपने आप को भोग यंत्र मानकर रहने लगती है। इसलिए वह अपने आप को विधवा नहीं समझती। बल्कि अपने जीवन की मर्मान्तक बेबसी को लेकर कहती है -

"विधवा तो मैं कभी रही नहीं! पति के बाद मन ही मन जीजा के प्रति समर्पित हो गई। जीजा ने जबाब दे दिया तो सफदर पर फिदा हुई, उसने चम्पा को कुलसुम बना लिया .. .. कुलसुम के बाद ? सतवन्त कौर ? हाँ, ... सरदारों ने मुझे यही नाम दिया था .. .. हाँ, मैं विधवा नहीं हूँ। सपने में भी अपने आप को मैं विधवा नहीं मानती। शर्मा जी पति नहीं है मेरे, उनका आसरा है मेरा पति। बच्चे नहीं होंगे, मैं ने आपरेशन करवा लिया है न ? "[२]

<u>उग्रतारा -</u>

१९६३ में लिखित इस उपन्यास में उपन्यासकारने समाज व्दारा पीडित नारी की दर्द भरी कहानी के माध्यम से विधवा विवाह समस्या का जिक्र किया है।

---

१. नागार्जुन - कुम्भीपाक - पृ. ९४, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली-२, प्रथम संस्करण - १९८५.

२. --- वहीं --- पृ. ९५-९६.

इस उपन्यास की नायिका "उगनी" का पंद्रह वर्ष की आयु में एक अच्छे युवक के साथ विवाह हो जाता है। परंतु विवाह के एक वर्ष बाद एक स्टीमर दुर्घटना में उसके पति की मृत्यु हो जाती है। विधवा होने के बाद उगनी अपनी माँ के पास सुंदरपुर-मढिया गाँव में रहने लगती है। उसके घर में माँ और दादी है, ये दोनों भी विधवा है। घरमें और कोई पुरुष व्यक्ति न होने के कारण उन्हे वैधव्यं का अभिशाप अधिक त्रस्त बना देता है। यौवन और सौंदर्य से उगनी के वैधव्य का अभिशाप अधिक गहन बनता जाता है। उसके रूप को देखकर गाँव के दो छछोर नव जवान उत्तेजित हो जाते हैं। जिससे वे उगनी को अपने चंगुल में फँसाने का मौका ढूँढते रहते हैं। एक दिन ये छछोर नव जवान उगनी को पकडकर एक फुस की कुटिया में ले जाकर उसपर बलात्कार करते हैं। इस घटना से उगनी मन ही मन टूटती जाती है।

उसके पडोसी नर्मदेश्वर और उसकी भाभी उगनी के प्रति हमदर्दी दिखाते हैं। भाभी उगनी को समझा-बुझाकर शिक्षा लेने को प्रेरित करती है। एक दिन नर्मदेश्वर, उसकी भाभी और उसका एक विधुर मित्र कामेश्वर आदि में उगनी के असहाय मुक क्रंदन को लेकर उसकी समस्यापर चर्चा करते है। उस नर्मदेश्वर और उसकी भाभी अप्रत्यक्ष रूप में कामेश्वर को प्रोत्साहित करने का प्रयास करते हैं। इस संदर्भ में नर्मदेश्वर की भाभी कहती है -

"स्त्री - पुरूषों में समान रूप से समझदारी पैदा होगी और मनोरंजन के कई और साधन निकल आयेंगे, तभी व्याभिचार घटेगा। देहात में खाते-पीते परिवार के अधेड भारी मुसीबत पैदा करते है। उगनी जैसी लडकियों के लिए ज्यादा संकट उन्ही की तरफ से आता है".. । [१]

---

१. नागार्जुन - उग्रतारा - पृ. ३०-३१, राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली-२ पेपर बॅक संस्करण-१९८७.

इस चर्चा से कामेश्वर के मान में उगनी के प्रति उत्सुकता जागृत होती है। वह उसके साथ विवाह करने का विचार करने लगता है । जब उगनी शिक्षा लेने के निमित भाभी के घर आती रहती है तब कामेश्वर भाभी की मदद से उगनी से परिचित हो जाता है। हर रोज भाभी के घर में भेंट होने लगती है। जिससे उन दोनों में लगाव निर्माण हो जाता हैं। धीरे धीरे यह लगाव प्रेम में परिवर्तित हो जाता है। अपने प्रेम को सफल बनाने के लिए दोनों नर्मदेश्वर और उसकी भाभी की सहायता से एक दिन रात में भाग जाते हैं।

परंतु दुर्भाग्य से रतनपुर में उन्हें पुलिस पकड लेती है। दोनों को कैद किया जाता है। कामेश्वर को नउ महिने की सजा हो जाती है और उसे गंगा तट वाले जेल में भेजा जाता है। उगनी को दो महिने की सजा हो जाती और उसे रतनपुर जेल में महिला वार्ड में रखा जाता है। इस महिला वार्ड पर पहरा देने के लिए भभिखन सिंह नामक पचास वर्षीय कुँवारे अधेड की नियुक्ति हो गयी थी। वह अपनी कामुक दृष्टि से नारी कैदियों को घुर-घुर कर देखा करता था। उसकी यह धारणा थी कि - कैदखाने में आनेवाली स्त्रियाँ किसी गलत अपराध के कारण ही आती है और कैद से छुटने के बाद रंडी बाजार में जाती है। परंतु उगनी का सजल और सलज्ज रूप देखकर भभिखन सिंह पिघलने लगता है, उसे अधिक दिलचस्पी दिखाने का प्रयास करता है। उगनी उसे प्रतिसाद नहीं देती। फिर भी वह प्रयत्नशील रहता है। यह देखकर महिला वार्ड की वार्डन भभिखन सिंह को बढावा देते हुए कहती है -

"सिपाहीजी, यह जो नयी छोकरी आयी है उसका आगे-पीछे कोई नहीं है। बिलकुल उडाउ माल है, जिसकी डाल में घोंसला होगा उसी

पेड के हवाले कर देगी अपने आप को। "[१]

इस बढावे के कारण भभिखन सिंह के मन में आशा का अंकुर फुटता है। वह हररोज उगनी से मिलने आता है, उसकी पुछताछ करता रहता है, कभी - कभी खाने के लिए भी कुछ लाकर देने का प्रयत्न करता है। परंतु उगनी, "कामेश्वर" के कैद से छुटने तक कैसे रहे. ? कहाँ रहे ? इस पर विचार करती रहती है। इस स्थिति में भभिखन जैसे पितृ-तुल्य व्यक्ति के साथ रहे या ना रहे इस संबंध मे उसके मन में विचार स्पर्श कर जाते है। उसकी यह व्दंव्द स्थिति देखकर भभिखन सिंह उसे अपने यहाँ खाना पकाने के काम को स्वीकार करने का प्रस्ताव रखता है। और वह इसे स्वीकार कर लेती है। उसकी सजा समाप्त होते ही वह भभिखन सिंह के साथ उसके घर जाती है। वहाँ वह उसे बर्फी खिलाता है परंतु वह बर्फी भंगवाली थी, जिससे वह थोडी देर में बेहोष हो जाती है और बेहोषी में ही भभिखन अपनी कुंठित काम वासना को पूरी कर लेता है। जब उगनी की समझ में यह बात आ जाती है तब वह पहले अपने आप को कोंसती है और बाद में भभिखन को कोंसती है। तब भभिखन उसके सामने विवाह का प्रस्ताव रखता है। उगनी अपने आप को निराश्रित और असहाय अनुभव करते हुए और अब कामेश्वर के योग्य न समझकर भभिखन के साथ विवाह करने के लिए तैयार हो जाती है। दूसरे दिन पुरोहित की साक्षी में होम-हवन करते हुए वैदिक विधि के साथ दोनों का विवाह हो जाता है। परंतु उगनी हमेशा कामेश्वर के साथ की हुई बेइमानी का भाव महसूस करती रहती है जिस के कारण कुछ दिनों तक भभिखन को वह प्रतिसाद नहीं देती। परंतु अपनी बेबसी को ध्यान रखकर बाद में

---

१. नागार्जुन - उग्रतारा - पृ. २३, राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली-२, पेपर बॅक संस्करण - १९८७.

मनमुटाव के साथ उसकी गृहस्थी सम्भालने लगती है। यह देखकर भभिखन सिंह उससे अधिक प्रेम करने लगता है, अधिक सुविधा देने के लिए प्रयत्नशील रहता है। वह भी उसकी इच्छाओं को समझकर घर के सभी काम करती रहती है, जिससे भभिखन उगनी में "अच्छी घरवाली" के सभी लक्षण महसूस करने लगता है।

परंतु उगनी भभिखन को "रक्षक" के रूप में ही अनुभव करती है, "पति" के रूप में नहीं। क्यों कि अब भी वह मन से कामेश्वर को समर्पित मानती है। इसलिए वह इस विवाह को "विवाह" नहीं बल्कि भभिखन को मिला हुआ "बलात्कार का अधिकार " मानती है। उसकी बेचैनी बढाने में पडोसी स्त्रियाँ भी पीछे नहीं रहती, वे उगनी को "छिनाल" या "रण्डी" के नाम से संबोधने लगती है। उसके साथ बातचीत तक नहीं करती। इस स्थिति के कारण वह रात-दिन कामेश्वर के संबंध में सोचती रहती है॥

कामेश्वर जेल से रिहा होते ही उगनी की तलाश में कपडे बेचनेवाले फेरीवाले के रूप में घुमते हुए एक दिन रतनपुर पुलिस लाइन में पहुँचता है। तब उसे उगनी भभिखनके पास रहती है इसका पता चलता है। तब वह कपडे बेचते-बेचते भभिखन के घर के पास आता है। दूर से उगनी को आंगन में देखता है, पहले उसे विश्वास नहीं होता कि वही उगनी है। परंतु जब दुसरे दिन फिर आता है तब उगनी से उसकी मुलाखत हो जाती है जब वह उसकी कर्म कहानी सुनता है तब वह विव्हल हो जाता है। वह उसे अपने साथ चलने का निवेदन करता है। परंतु उगनी इसे स्वीकार नहीं करती, वह अपने आपको उसके लायक नहीं समझती। क्यों कि वह चार महिने की गर्भवती हो गई थी।

इतना होते हुए भी कामेश्वर उसे अपनी प्रेमिका के रूप में ही देखता है, भले ही वह पराया गर्भ क्यों न ढो रही हो। वह उसे गर्भ के साथ स्वीकारने का निश्चय कर लेता है। उगनी को समझाते हुए एक दिन रात में उसे भगाकर नर्मदेश्वर की भाभी के घर ले जाता है।

उगनी की इस दर्दभरी कहानी को देखने से स्पष्ट हो जाता है कि समाज में विधवा विवाह निषिध्द होने के कारण कम आयु में विधवा होनेवाली नारियों की कैसी भयानक हालत होती है, इन नारियों को बिना अपराध किन - किन अवस्थाओं से गुजरना पडता है इसका यथार्थ चित्रण नागार्जुन ने इस उपन्यास में उगनी के माध्यम से स्पष्ट करने का प्रयास किया है।

0-0-0-0-0-0